: तृतीय अध्याय :

: तृतीय अध्याय :

नायिका : स्वरूप, विकास एवं प्रकार

आधुनिक काल की हो या प्राचीन काल की हो, साहित्य की किसी भी विधा में अगर कोई पुरूष पात्र प्रधान हो तो वह `नायक` कहलाता है और किसी स्त्री पात्र को केंद्र में रखकर किसी कृति का निर्माण किया गया हो, तो वह `नायिका` कहलाती है। नायिका के स्वरूप पर प्राचीन काल गया हो, तो वह `नायिका` कहलाती है। नायिका के स्वरूप पर प्राचीन काल में भरतमुनि से लेकर कई आलोचकों ने अपने अलग-अलग विचार प्रकट किये हैं। प्राचीन काल में जहाँ शृंगार रस की चर्चा भरतमुनि जैसे आचार्यों ने की है, वहाँ उन्होंने किसी स्त्री के किसी पुरुष के प्रति होनेवाले अनुराग के प्रसंग में होनेवाली नारी को नायिका की संज्ञा दी है। नायिका का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। उसका कथा संगठन में प्रमुख स्थान होता है। उसे ही नायक की भाँति फलागम की स्थिति प्राप्त होती है। और कथा के सारे सुत्र उसके हाथ में होते है। नायिका का अर्थ वही लिया जाना चाहिए, जो अंग्रेजी के Heroin शब्द का होता है। नायिकाओं की अनेक श्रेणियाँ होती है। नायिका के निर्वाचन में तत्कालीन युग की परिस्थितियों, सामाजिक मर्यादाओं, नैतिक आदर्शों और स्वयं लेखक की अपनी मान्यताओं एवं धारणाओं का अत्यंत प्रभाव पड़ता है।

भगवतीचरण वर्माजी के `चित्रलेखा` उपन्यास में नायिका चित्रलेखा है। उसी के इर्द-गिर्द सारा कथानक घूमता रहता है। अत: इस उपन्यास को नायिका प्रधान उपन्यास कहा जाता हैं। इसमें प्रमुख पात्र के रूप में आया हुआ बीजगुप्त भी नायक कहा जा सकता है, क्योंकि नायिका प्रधान रचना की नायिका का पति अथवा प्रेमी नायक कहलाता है।

अगर हम जायसी के `पद्मावत` को देखें तो उसमें राजा रत्नसेन भी नायक बन सकता है फिर भी उसे नायिका प्रधान काव्य कहा गया है। इसमें पद्मावती के इर्द-गिर्द ही कथानक घूमता रहा हैं। वृंदावनलाल वर्माजी का उपन्यास `मृगनयनी` भी इसी कोटि का नायिका प्रधान उपन्यास है, जिसका नायक मानासिंग बन

सकता है। लेकिन इन सबको भी नायिका प्रधान माना जाता है जिसके लिए उपर्युक्त तर्क ही महत्वपूर्ण रूप से बताया जाता है। इसके साथ ही जहाँ नायक प्रधान रचना हो वहाँ नायक की पत्नी अथवा प्रिया भी नायिका कहलायी जाती है।

नायिकाओं के स्वरूप की चर्चा प्राचीन संस्कृत साहित्य से आधुनिक हिंदी साहित्य तक निरंतर चलती आयी है। अत: नायिकाओं के स्वरूप की चर्चा दो स्वतंत्र विभागों में करना सुविधाजनक होगा।

(1) नायिकाओं का प्राचीन स्वरूप।

(2) नायिकाओं का आधुनिक स्वरूप।

नायिकाओं का प्राचीन स्वरूप:-

स्त्रियों में भाव छिपाने की जो प्रवृत्ति होती है उसकी मात्रा पुरुषों की तुलना में अधिक होती है। अनुराग छिपाना, उत्कंठा में भी भाव छिपाना, गुणनुसरण में भी दोष दर्शन और जिस चीज की चाह है, उसके प्रति नकारात्मक भाव दिखाना ये स्त्री-चरित्र की स्वभावगत विशेषताएँ हैं। प्राचीन काल से ही संस्कृत साहित्यशास्त्रीयों ने इसका बहुत गहराई से अध्ययन किया है। संस्कृत साहित्यशास्त्र में नायक-नायिका को तब विशेष महत्व दिया जाने लगा जब उसमें रस की प्रतिष्ठा हो गई और रसों में भी शृंगार को रस-राजत्व प्राप्त हो गया तो शृंगार के आलंबन रूप नायक-नायिका को भी विशेष महत्त्व दिया जाने लगा और उनका विस्तृत वर्णन होने लगा।

आरंभ में केवल नाट्यशास्त्रों में ही नायक-नायिका का वर्गीकरण एवं उनके भेद, प्रभेदों का वर्णन होता था, जिससे ही नाटककार अपने पात्रों के शील, मर्यादा का आदि से अंत तक उचित रीति से निर्वाह कर सके। भरत के 'नाट्यशास्त्र' के बाईसवें अध्याय में नायिका भेद की लगभग समस्त सामग्री किसी-न-किसी रूप में मिल जाती है। उसमें मुख्य विषय के अतिरिक्त हाव-भाव, मान-मोचन के उपाय, दूती आदि अन्य सब प्रसंगों का भी विस्तृत वर्णन है। भरत के अनुसार प्रकृति के विचार से स्त्रियाँ तीन प्रकार की होती है - उत्तमा, मध्यमा और अधमा। इन तीनों को उन्होंने उनकी अवस्थानुसार आठ भेदों में विभाजित किया -

1. वाससज्जा 5. खण्डिता

2. विरहोत्कण्टितापि 6. विप्रलब्धा

3. स्वाधीनपतिका 7. प्रेषितभर्तृका

4. कलहान्तरितापि 8. अभिसारिका

इसके आगे भरत ने स्त्रियों के फिर तीन भेद किये हैं - 1. वेश्या 2. कुलजा और 3. प्रेष्या। वैसे तो ये तीनों भेद वास्तव में सामान्या, स्वकिया, ओर परकिया के प्रकारान्तर ही है।

भरत के पश्चात् नायिकाओं का अधिक विवेचन और विश्लेषण करनेवाले आचार्य धनंजय है।उन्होंने वयभेद को पूरे विस्तार के साथ भरत के प्रकृति कर्म और अवस्था-भेदों के अतिरिक्त धीरादी भेद किय `है। उन्होंने मुग्धा के- वयोमुग्धा, काममुग्धा, रतिवामा, कोपमृदू।

प्रौढ़ाके - गाढ़, यौवना, भाव प्रगल्भा, रति प्रगल्भा आदि भेद किये है। आचार्य विश्वनाथ ने उनसे भी आगे जाकर और भी सुक्ष्म भेद किये है।

नायिका भेद के संदर्भ में संस्कृत का `कामसूत्र' ग्रंथ नायिका के शारिरिक सौंदर्य संबंधी बत्तीस लक्षण बतात है, जैसे-

1. नख - रक्त -वर्ण 17. ग्रीवा- कुम्बवत

2. पाद पृष्ठ - कछुए के पीठ जैसी 18. ओष्ट - लाल

3. गुल्फ - गोलाकार 19. दाँत - कुन्दवत

4. पैर की अंगुली - अविरल 20. वाणी - मधूर

5. तलवा - लाल और शुभचिन्ह युक्त 21. नासिका - सीधी

6. जंघा - गोल 22. नेत्र - कुंजवत

7. जानु - सुडौल 23. भौंहे - धनुष्यवत

8. उरू - अविरल (चढ़ाव उतारदार) 24. ललाट - अर्धचंद्रवत

9. भग - पीपल पत्र जैसा

10. भग का मध्यभाग - गुप्त

11. पैर कुम पृष्ठवत

12. नितंब - माँसल

13. नाभि - गंभीर

14. नाभि का ऊपरी भाग - त्रिवली युक्त

15. स्तन - गोल और कठोर

16. पेट - मृदू लामरहित

25. कर्ण - कोमल

26. केश - नीले, सटकारे, सुकुमार

27. शीश - सुडौल

28. कलाई - गोल कोमल

29. बाँह - सुडौल

30. हथेली - रक्तवर्ण

31. हाथ की उँगली - पतली सुडौल

32. मनीबंध - नीचे को दबा हुआ

इन बत्तीस लक्षणों के अतिरिक्त नायिकाओं के अठ्ठाईस अलंकार भी गिनाये जाते है। लेकिन सबसे प्रमुख नायिका भेद तो प्रमुख रूप से तीन ही माने जाते हैं। -

1. स्वकिया

2. परकीया

3. सामान्या

स्वकीया नायिका :-

इस नायिका के संबंध में डा. पुष्पलताजी ने लिखा है - ``जो स्त्री समाज की समस्त मर्यादाओं का पालन करती हुई अपने साथ विधीपूर्वक विवाहित पूरूष से ही प्रेम करती है वह ही स्वकीया नायिका है। बिहारी ने स्वकीया प्रेम पर कोटि अप्सराओं को न्योछावर कर दिया है। साहित्य में स्वकीया प्रेम को सबसे अधिक महत्व प्रदान किया गया है।``[1] इस नायिका के भी कई भेद बताये जाते है -

<u>मुग्धा</u> - मुग्धा याने वह स्त्री जिसके शरीर में यौवन और काम का संचार आरंभ हो जाता है।

<u>मध्या</u> - मध्या में काम अपेक्षाकृत कम होता है, पर साथ ही उतनी लज्जा भी होती हैं।

<u>प्रौढ़ा</u> - प्रौढ़ा नायिका की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह नायिका कामवासना से अन्धी हो जाती है रात दिन

इसे चैन नहीं पड़ता। यश और अपयश की इसको चिंता नहीं रहती।

आलोचकों ने मध्या और प्रौढ़ा के अलग- अलग तीन भेद किय है जैसे - धीरा, अधिरा और धीरा-अधीरा। इसी प्रकार मध्या और प्रौढ़ा के भी छ: भेद हो जाते है -

मध्या धीरा - अपने पति को अन्य स्त्री पर आसक्त जानकर मध्या धीरा नायिका अपने क्रोध या रोष को व्यंग द्वारा नायक पर प्रकट करती है।

मध्या अधीरा - यह नायिका कटु उक्तियों के द्वारा नायक पर अपना क्रोध प्रकट करती है।

मध्या धीरा-अधीरा - यह नायिका प्रिय से अप्रिय वचन न कहकर समभाव के द्वारा अपना क्रोध प्रकट करती है। प्रौढ़ा की मान चेष्टाएँ मध्या की मान चेष्ठाओं से कुछ भिन्न होती है। इनके भी मध्या के समान- धीरा, अधीरा, और धीरा-अधीरा ये तीन भेद है -

प्रौढ़ा धीरा - यह नायिका अपने रोष को प्रकट न करके छिपा लेती है और रतिकला के प्रति उदासीन रहती है।

प्रौढ़ा अधीरा - यह नायिका पति को ताड़ना देकर अपना क्रोध प्रकट करती है।

प्रौढ़ा धीरा-अधीरा - यह नायिका अपने रोष को छीपा नहीं पाती। वह ऐसे वचन बोलती है जिनका वाच्यार्थ तो डाँट फटकार परक नहीं होता किंतु उसमें रोष की व्यंजना अवश्य निकलती है। उसके कथनों में भी कुछ खिझसी लक्षित होती है।

आगे चलकर इन तीन भेदों के पति-प्रेम के आधार पर दो-दो भेद और हुए है - जेष्ठा और कनिष्ठा। जिस पर पति का प्रेम अधिक हो वह जेष्ठा और जिस पर अपेक्षा कृत कम हो उसे कनिष्ठा कहते है।

परकिया नायिका :-

परकीया नायिका शास्त्रों में दो प्रकार की मानी गयी है। कन्या और परोढ़ा। कन्या को परकीया माना जाता है क्योंकि उसका सम्मिलन एवं सुरत स्वच्छंद नहीं होता। इसके साथ मेल-जोल बुरा माना जाता है। इसका प्रेमकाव्य में स्वेच्छा पूर्वक अंग तथा अंगी इन दोनों रूपों में रखा जाता है। परोढ़ा प्रेम शास्त्र विहित और लोकसम्मत नहीं है। इसका प्रेम सदैव रसाभास का आलंबन होता है। इसका भी विस्तार के साथ

चित्रण किया गया है। इसके परम्परागत छ: भेद है, जैसे -

गुप्ता नायिका - यह नायिका पर पूरूषों के साथ अपनी रति को गुप्त रखती है और उसे छिपाने के लिए अनेक चेष्ठाएँ करती है।

विदग्धा - यह नायिका पर-पुरूषानुराग का क्रिया एवं वचन की चतुराई द्‌वारा संकेत करती है। इसके दो भेद है - वचन विदग्धा और क्रिया विदग्धा।

लक्षिता - यह नायिक पर पूरूषों के प्रति किये गये प्रेम को छिपा नहीं पाती उसका प्रेम सब पर प्रकट होता है।

कुलटा - कुलटा वह स्त्री है जो पूरूषों के साथ अपनी रति की इच्छा दर्शाती है।

अनुशयाना - संकेत स्थल के नाश अथवा भविष्य में इसके नाश की आशंका या फिर किसी अन्य कारण से यह जानकर की प्रेमी वहाँ गया और मैं नहीं गयी, ऐसा सोचकर दु:खी होनेवाली नायिका अनुशयाना कहलाती है।

मुदित नायिका - जब नायिका सम्भोग सुख प्राप्ती की संभावना में आनंदित होती है तब उसे मुदित नायिका कहते है।

सामान्या नायिका :-

यह नायिका प्राय: सभी की प्रेयसी बन सकती है। इस नायिका का वर्णन न तो धर्मशास्त्रानुकुल है और न साहित्यशास्त्र सम्मत इसे डॉ. इन्द्रपाल सिंह ने साधारण स्त्री कहा है, वे लिखते है - ``साधारण स्त्री गणिका एवं कला प्रगल्भता तथा धौर्त्ययुक्त(धूर्त) होती है। छन्न काम (छिपकर कामतृप्ति करनेवाले) जैसे क्षेत्रिय (वेदाध्यायन कर्ता) वणिक लिंगी (धर्मध्वजी, सन्यासी, ढोंगी, आडम्बरी) आदि सुखार्थ (जिनको वा जिसने सुखपूर्वक सरलता से, अनायास धन प्राप्त हो) अज्ञ (मुर्ख) स्वतंत्र निरंकुश, अहंयु (अहंकारवान् अहंकारयुक्त) पण्डक (नपूंसक) आदि का रंजन रक्त (अनुरक्त) के सदृश्य (इस प्रकार मानो वह गणिका इनपर अनुरक्त हो) करती है।``[2]

अवस्था भेद के अनुसार स्वकीया, परकीया और सामान्या के आठ-आठ भेद हैं।

प्रेषित पतिका - अपने प्रियतम के वियोग से दु:खी रहनेवाली नायिका प्रोषित पतिक नायिका कहलाती है। यह

नायिका की समुत्कंठा को चित्रित करती है।

खण्डिता नायिका - यह नायिका अपने नायक के शरीर पर अन्य स्त्री के रति के चिन्ह देखकर दु:खी होती है, उसे खण्डिता नायिका कहा जाता है। यह अत्यंत इर्ष्या युक्त होती है। डॉ. इन्द्रपाल सिंह लिखते हैं - ``अन्य स्त्री सम्भोगजन्य सुवास का प्रसार नायक के अपराध की सुचना दे देता है जिससे नायिका इर्ष्या-कषायिता एवं खण्डिता प्रतित होती है।``[9]

कलहन्तरिता - नायक का अनादर करने के पश्चात् स्वयं ही अपने व्यवहारपर पश्चाताप करनेवाली स्त्री कलहन्तरिता कहलाती है। यह नायिका क्षोभ के कारण पहले प्रिय का तिरस्कार करती है फिर उसके चले जाने के पश्चात् पश्चाताप करती है।

विप्रलब्धा - जब नायक किसी नायिका को एक स्थानपर बुलाता है और उस संकेत स्थान पर वह नायक को प्राप्त नहीं कर पाती तो वह अत्यंत दु:खी होती है। इस प्रकार की नायिका को विप्रलब्धा कहते है।

विरहोत्कंठिता - संकेत के स्थानपर नायक की उत्सुकता पूर्वक प्रतिक्षा करनेवाली नायिका को विरहोत्कंठिता कहते है। ऐसी नायिकाओं की उद्विग्नता तब और बढ़ जाती है जब रात्रि के उत्तरार्ध में भी प्रिय नहीं आता।

वासकसज्जा - यह नायिका शृंगार करके निश्चित समय पर प्रिय की प्रतिक्षा करती है ऐसी नायिका वासकसज्जा कहलाती है। ऐसे समय वह प्रसन्न होकर अपने शरीर एवं शयन कक्ष को सुसज्जीत करती है।

स्वाधीन पतिका - यह नायिका उस प्रकार की है जो चाहती है कि नायक हमेशा से ही उसके आधीन रहें। यह नायिका प्रिय को प्राणों से प्यारी होती है। वह प्रयत्न करके कभी नायक के अपराध ढूँढ नहीं पाती इसलिए उसे मान करने का अवसर नहीं मिलता।

अभिसारिका - यह नायिका स्वयं ही नायक से मिलने जाती है। ऐसी नायिका को अभिसारिका कहा जाता है। यह दो प्रकार की होती है - शुक्लाभिसारिका और कृष्णाभिसारिका। शुक्लाभिसारिका उसे कहते है जो चाँदनी रात में वेशभुषा धारण करके अभिसरण करती है। कृष्णाभिसारिका कृष्णरात्री में काले वस्त्र पहनकर अभिसरण करती है। यह कामार्त होती है।

उपर्युक्त नायिकाओं के आभुषण का विश्लेषण करते हुए डा. इन्द्रपाल सिंह लिखते है- ``अन्तिम छ: (विरहोत्कंठिता, खण्डिता, कलहान्तरिता, विप्रलब्धा, प्रोषितप्रिया तथा अभिसारिका) के अलंकार हैं -चिंता, नि:श्वास, खेद, अश्रु, वैवर्ण्य तथा ग्लानि। प्रथम दो (स्वाधिनपतिका तथा वासकसज्जा) के अलंकार क्रिडा उज्जवलता तथा हर्ष है।``[4]

नायिकाओं की दशा नुसार नायिकाऐ तीन प्रकार की मानी जाती है- अन्य सम्भोग दूखिता, वक्रोक्तिगर्विता और मानवती नायिका का वर्णन विरह के अन्तर्गत किया जाता है।

अन्य सम्भोग दूखिता - यह नायिका अपने पति के रति चिन्ह किसी अन्य स्त्री के शरीरपर देखकर दु:खी होती है।

वक्रोक्तिगर्विता - यह नायिका दो प्रकार की होती है - सौंदर्य गर्विता और प्रेमगर्विता। सौंदर्यगर्विता वह कहलाती है जो अपने रूप-लावण्य का गर्व करें। अपने प्रिय के प्रेम का गर्व करनेवाली स्त्री प्रेमगर्विता कहलाती है।

गुण के अनुसार भी नायिकाओं के तीन भेद किये जाते है - उत्तमा, मध्यमा, और अधमा।

उत्तमा - प्रियतम के दोष जानते हुए भी जो नायिका रोष न करे और उसका अहित देखकर भी हित करे, वह उत्तमा नायिका कहलाती है।

<u>मध्यमा</u> - प्रिय के हित का बदला हित में और उसके दोष देखकर मान करनेवाली नायिका मध्यमा कहलाती है।

<u>अधमा</u> - जो नायिका प्रिय के हित करने पर भी मान धारण कर लेती है, वह अधमा की कोटि में गिनी जाती है।

काव्यशास्त्र के अंतर्गत नायिकाओं के चार प्रकार माने जाते है - 1. पद्मिनी 2. चित्रिणी 3. शंखिनी 4. हस्तिनी

<u>पद्मिनी</u> - पद्मिनी नारी कमनीयवदनवाली, नवनीत या कमल दल के समान कोमल होती है। इसका मुख चन्द्रमा और नेत्र हिरणी के शावक के समान चपंल होते है। इसके शरीर से पद्म पराग की सुगंध आती है। नेत्रों के कारों में ललिमा छायी रहती है। उन्नत कुच बिल्वफल के समान मनोहर और आकर्षक होते है। नासिका तिल के पुष्प समान मृदू और मधूर होती है। वह धार्मिक बातों में रूची रखती है। इसका शरीर चंपा के समान गौर वर्ण होता है। राजहंसिनी की तरह गति होती है। हंसिनी के सदृश्य मधूरवाणी बोलती है। यह लज्जाशिल और मानिनी भी

होती है। पति का आदर करती है और लक्ष्मीरूपा होती है।

चित्रिणी - पद्मिनी के बाद चित्रिणी की नारी श्रेष्ठ होती है। वह तन्वंगी, गजमागिनी, चपल द्वग होती है। वह आकार में न बहुत छोटी होती है न बड़ी। उसकी कटि क्षीण होती है। बिंबाफल के सदृश्य होठ होते है। चित्र, वस्त्र, माला, भुषण आदि शृंगार के बनाने में सदैव लगी रहती है, प्रणयोपचार की अनुरागिनी होती है।

शंखिनी - इस जाति की स्त्री इन दोनों की अपेक्षा हेय होती है। वह मोटी या पतली होती है। बाँहे लंबी, सिर छोटा, पैर बडे होते हैं। लाल पूष्पों के समान वस्त्रों की इच्छा रखती है। पित्त प्रकृति की होती है। कर्कश स्वर बोलती है। इसकी नासिका उन्नत होती है। यह व्यभिचार में मन रखती है।

हस्तिनी - हस्तिनी नायिका सब में निकृष्ठ होती है। वह बुरे ढ़ंग से चलनेवाली होती है। पैर मोटी-मोटी उँगलियों से समन्वित होते है। आकार में गोल मटोल होते हैं। उसके शरीर से हाथी के मद के सदृश्य दूर्गन्ध आती है। ओठ चंचल और बड़े होते हैं। आँखे पिंगल वर्ण की होती है। विलास और व्यभिचार में अनुराग रखती हैं।

नायिकाओं के अलंकार :-

नायिकाओं के अठ्ठाईस अलंकार बताये जाते हैं, इनमें से तीन अंगज, सात अयन्तज ओर अठ्ठारह स्वभावगत होते हैं। अंगज, अलंकारों में भाव, हाव, तथा हेली आते हैं। शोभा, कान्ति, दीप्ति, माधूर्य, प्रगल्भता, औदार्य, धैर्य ये सात अयन्तज है और लीली, विलास, विच्छिती, विभ्रम, किलकिंचित, मोट्टाचित, कुट्टमित, ललित, विहत ये दस स्वभावगत है।

नायिका भेद का मुल्यांकन :-

नायिका भेद के बारे में प्राचीन काल से लेकर जितनी सारी बातें कही गयी है उनके पीछे कोई मनोवैज्ञानिक आधार नहीं है। उसे फिर भी अनर्गल प्रलाप नहीं कहा जा सकता। सभी ने किसी एक ही आधार को लेकर विभाजन नहीं किया गया है। इसमें विभिन्न आधार है, जैसे - जाति, कर्म, पति का प्रेम, वय, मान, दशा, काल, प्रकृति या गुण इन आधारों को लेकर नायिकाओं के भेदों का विश्लेषण किया गया है। डा. नगेन्द्र इस सन्दर्भ में लिखते हैं - ``नायिका भेद का विशाल भवन जिस मुलाधार पर खड़ा हुआ है उसमें अनेक प्रकार के

समान-असमान अवांतर आधारों की संसृष्ठी है। जो कहीं सामाजिक सम्बन्ध, कहीं स्वभाव, कहीं मनोदशा, कहीं काम प्रवृत्ति, कहीं अभ्यन्तर और शारीरिक प्रकृति, कहीं केवल नायक के प्रेम की न्युनता अधिकता पर ही आश्रित है। इसमें कुछ आधार मुलगत और नितांत स्थुल है।"[5]

इन सभी वजहों से ये प्राचीन काल का नायिका भेद सिद्धान्त शास्त्र न बनकर एक चित्र संग्रह बन गया है, ऐसा लगता है।

नायिकाओं का आधुनिक स्वरूप :-

प्राचीन काल में आचार्य भरतमुनि से लेकर आज तक के साहित्यकार नायिका भेद की चर्चा करते हैं। स्त्री के रूप गुण और शील आदि के आधारपर इतने भेद अधिक गिना दिये गये हैं कि उनकी संख्या कभी-कभी 384 तक भी हो गयी है। रीतिकाल के कवि, आचार्य चिन्तामणि, जसवंत सिंह, मतिराम, भिखारीदास, पद्माकर तथा गुलामनवी, रसलीन, आदि आचार्यों द्वारा भी नायिका भेद की चर्चा की गई। परंतु इसके आधार प्राय: स्थुल और बाह्य रहें।

आधुनिक काल के परिस्थितियों में परिवर्तन आता गया और अंगविन्यास और स्वभाव को लेकर किये गये ये भेद काल सापेक्ष बन गये। आजकल की आधुनिक नायिकाओं के लिए ये भेद ठीक नहीं बैठते आधुनिक काल में हिंदी साहित्य में काव्य के अतिरिक्त कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, रेडिओ, रिपोतार्ज, डायरी, आत्मकथा, जीवनी आदि कई विधाओं का विकास हो चुका है। इन्हीं के वजह से नायिका का एक निश्चित आधार लेकर वर्गीकरण करना बहुत कठिन हो गया है।

हिंदी कहानियों में नायिका की कल्पना :-

नायिका का स्थान नारी पात्रों में अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। कथा के संगठन में उसका स्थान महत्वपूर्ण होता है। उसे भी नाटक के फल की प्राप्ति होती है। और कथानक की सारी स्थितियाँ उसी के हाथ में होती है। हर एक साहित्यकार जब नायिकाओं को विभिन्न दृष्ठिकोनों से देखता है। इस आधारपर, उनकी अलग- अलग श्रेणियाँ बनती है। कोई विरांगना के रूप में, कोई जासुस के रूप में कोई माँ के रूप में, तो कोई प्रेमिका के रूप में

13273
A

उसे चित्रित करता है। जब कि कोई विलासिनी के रूप में तो कोई पत्नी के रूप में उसका चित्रण करता है।

नायिका का चूनाव तत्कालिन परिस्थितियाँ, सामाजिक मर्यादाओं, नैतिक आदर्शों और लेखक की मान्यताओं के आधार पर होता हैं। उसका स्वरूप इन्हीं पर निभर करता है। आधुनिक काल में आर्थिक दृष्ठि से समृद्धता लाने के लिए यह आवश्यक है कि आज की नारी सामाजिक संघर्ष में पुरूषों के कंधे-से-कंधा मिलाकर चले और अंतीम उद्देश्य तक पहुँचने में सहाय्यता दे। आज वह अधिकारों से वंचित नहीं है। अब वह केवल, भोग-विलास की सामग्री नहीं है। आज वह घर की चार दिवारी में कैद नहीं है। आज की कहानियों की नायिकाएँ इसी रूप में चित्रित की जाने लगी है। आज किसी भी कहानी की नायिका भारतीय परम्परा का अनुसरण करनेवाली या नारीगत स्वाभाविक मर्यादाओं का पालन करनेवाली नहीं है।

हम पाते हैं कि जिस प्रकार मानव जीवन में विविधता है उसी प्रकार हिंदी कहानी में भी विविधता है। नारी की लगभग सभी रूपों का चित्रण कहानियों में पाया जाता है। इनमें से दो रूप हैं - वासनात्मक तथा अवासनात्मक। वासनात्मक नारी के अंतर्गत वेश्या, प्रेमिका, नर्तकी, विलासिनी तथा विवाहिता आदि नारी के रूप होते हैं। तो अवासनात्मक नारी के अंतर्गत माँ, बहन, आदि रूप होते हैं। नायिकाओं का वर्गीकरण करते समय निम्न चार तथ्यों को भी समझना चाहिए -

1. समाज के नारी की स्थिति।

2. कहानी लेखिका की स्थिति।

3. कहानी शिल्प में प्रयोग।

4. स्थानियता।

उपयुक्त आधारोंपर कहानी नायिकाओं को कई प्रकारों में रखा जा सकता है। जैसे -

1. सफल प्रेमिकाएँ

2. असफल प्रेमिकाएँ

3. फॅशन परस्त विलासिनी नायिकाएँ

4. विधवा नायिकाएँ

5. कुण्ठाग्रस्त नायिकाएँ

6. वेश्याएँ

7. नर्तकी नायिकाएँ

8. राजनीति में भाग लेनेवाली नायिकाएँ

9. विरांगनाएँ

10. कृषकबालाएँ

11. मजदूरिने

12. जासुस नायिकाएँ

13. आधुनिक नायिकाएँ

मोहन राकेश की `जानवर और जानवर` निर्मल वर्मा की `माया का मर्म` इन कहानियों की नायिकाएँ सफल प्रेमिकाएँ इस कोटि में आती है। तो निर्मल वर्मा की `परिंदे`, नरेश मेहता की `एक इतिश्री`, राजेंद्र यादव की `छोटे-छोटे ताजमहल`, उषा प्रियवंदा की `कोई नहीं`, मन्नु भंडारी की `यही सच है` आदि कहानियाँ असफल प्रेमिका के अंतर्गत आती है।

हिंदी उपन्यास में नायिका की कल्पना :-

मुलत: हिंदी उपन्यास में नायिकाएँ दो रूपों में पायी जाती हैं नायिका तथा सहनायिका। नायिका स्त्री पात्रों में उच्च स्थान की अधिकारी हैं जिसके माध्यम से कथानक को गति प्राप्त होती है। उपन्यास की मुल कथा को सफलतापूर्वक अंतिम उद्देश्य तक ले जानेवाली नायिका कहलाती है। सभी पात्रों में यह अलग दिखाई देती है। नायिका के माध्यम से उपन्यासकार अपनी बात कह सकता है। उपन्यास की प्रमुख घटनाएँ उसी के साथ जुड़ी होती हैं।

नायिकाओं की श्रेणियों के मुलतम तीन प्रमुख आधार माने जाते है

1. युग की सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक परिस्थितियाँ।

2. उपन्यासकारों का उद्देश्य।

3. उपन्यासकारों का दृष्टिकोन।

एक युग ऐसा था जिसमें चित्रित नायिकाएँ एकदम भावूक, गृहलक्ष्मी है जिसके लिए तत्कालिन, सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक, नैतिक परिस्थितियाँ कारण रही है। आधुनिक युग में यही परिस्थितियाँ परिवर्तित हुई, संघर्ष, विश्वव्यापी असंतोष, अतृप्ति, कुण्ठण बढ़ने लगी। इस काल की नायिकाएँ यथार्थवादी बन गयी है।

जैसे- जैसे उपन्यासकार का उद्देश्य बदलता है वैसे नायिकाओं का स्वरूप भी परिवर्तित होता जाता है। जैसे प्रेमचंद आदि ने नारी को चार दिवारी में बद्ध असहाय्य नारी के रूप से उठाकर जीवन की वास्तविकता की भुमिपर ला खड़ा किया। परंतु आधुनिक काल में मनोविश्लेषण वाद को लेकर नैतिकता के मानदण्डो को तोड़ा जाने लगा जिसे शायद आधुनिक नायिका स्वीकार न करें।

उपन्यासकार के दृष्टिकोन से भी नायिका के स्वरूप में परिवर्तन हो सकता है। प्रेमचंद के पहले सुधारवादी दृष्टि थी, प्रेमचंदजीने आदर्शवाद की कल्पना प्रस्तुत की। यथार्थवादी लेखक उसे यथार्थरूप में प्रतिष्ठित करते हैं।

उपर्युक्त विश्लेषण के आधारपर हम नायिकाओं को तीन वर्गों में विभाजित कर सकते हैं - प्रेमिकाएँ, 2. गृहस्थ नायिकाएँ 3. अन्य प्रकार की नायिकाएँ। प्रेमिकाओं के अंतर्गत सफल तथा असफल दोनों ही प्रकार की नायिकाएँ आती है। गृहस्थ जीवन की सफलतापूर्वक निर्वाह करनेवाली और असफल ये दो प्रकार गृहस्थ नायिकाओं के अंतर्गत आती है। अन्य नायिकाओं में नर्तकियाँ, विलासिनी, वेश्याएँ, कृषकबालाएँ और वीरांगनाएँ आदि नायिकाएँ आती है।

हिंदी नाटकों में नायिका की कल्पना :-

हिंदी नाटक का विकास चार युगों में माना जाता हैं। इसी आधारपर नायिकाओं की कल्पना में हुआ परिवर्तन हम दिखा सकते हैं।

1. भारतेंदू युग - राष्ट्रीय जागरण के इस युग में समाज जीवन जो रूढ़ि परम्पराओं में बद्ध हो चुका था, वह मुक्त हो उठा। कुछ समाज सुधारकों ने नारी के संदर्भ में कुछ सुधार किये। इस काल के नाटक इसी नव जागरण की कथा कहते हैं। इस युग के नाटकों की नायिकाओं को चार वर्गो में रखा जा सकता है -

1. आदर्शोन्मुख पौराणिक नायिकाएँ।

2. आदर्शोन्मुख ऐतिहासिक नायिकाएँ।

3. धार्मिक प्रवृत्ती की नायिकाएँ।

4. राष्ट्रवादी नायिकाएँ।

इस युग के नाटकों की नायिकाएँ समाज का सच्चा, प्रतिनिधित्व करती है। इसकी प्रमुख समस्याएँ थी -बाल विवाह, पुरूष का सामाजिक प्रभुत्व और स्त्री की दासता, विधवा विवाह, अनमेल विवाह, नारी स्वातंत्र्य, पर्दाप्रथा, स्त्री शिक्षा, तथा वेश्या वृत्ति इस युग की नायिकाओं को प्रेमिकाएँ, गृहस्थ नायिकाएँ तथा आधुनिक चेतना संपन्न नायिकाएँ इन तीन कोटियों में विभाजित किया जा सकता है।

2. द्विवेदी युग - इस युगपर स्वामी विवेकानंद, एंनी बेसेंट नामक विदेशी महिला आदि के विचार एवं सुधारकार्य का प्रभाव पड़ा। इस युग में बहुत ही कम नाटक लिखे गये। परंतु नायिका की कोई नयी कल्पना सामने नहीं आयी। नायिका कल्पना सम्बन्धी वही प्राचीन परिपाठी चलती रही।

3. प्रसाद युग - जयशंकर प्रसाद ने हिंदी के नाटक साहित्य को सजाया एवं सवारा। प्रसादजी ने ही नायिकाओं को प्राचीन परम्पराओं और रूढ़ियों से मुक्त किया। इस युग की नायिकाओं में जीवन की नयी चेतना, नये मुल्य प्रतिफलित होते हैं। प्रसादजी को तो पुरूष पात्रों की अपेक्षा नारी पात्र अधिक सफल और सजीव दिखाई देते हैं। जो तेज `अजात शत्रू` की `छलना` और मल्लीका में है, राजश्री में है, स्कन्दगुप्त की अनंतदेवी देवसेना और विजया में है, वह नायकों अथवा अन्य पुरूष पात्रों में दिखाई नहीं देता।

4. प्रसादोत्तर युग - आधुनिक नारी के सर्वप्रथम दर्शन इस युग में होते हैं। आज हर क्षेत्र में नारी आगे बढ़ रही है। पुरूष के ही समान वह काम करती है। एक तरह से यह मुक्त हो चूकी है। पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति का पूरा प्रभाव इस युग तक पूरे देश पर पड़ा चूका है। इसी वजह से इस युग की नायिकाएँ भारतीय और पाश्चात्य युग के बीच की कड़ी बन गयी है। इस युग की नायिकाएँ प्रेम, वासना, विवाह, आदि के साथ पाप और पुण्य का समाधान ढूँढने की कोशिश में लगी रहती है। प्राचीन धारणाओं को ये तोड़ती दिखाई देती हैं। लक्ष्मीनारायण मिश्र के `राजयोग' की नायिका चंपा, `सिंदूर की होली' की नायिका मनोरमा इस दृष्ठि से उल्लेखनिय दिखाई देती है।

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य में नायिका का स्वरूप :-

स्वतंत्रता प्राप्ती के उपरांत भारतीय नारी की स्थिति में राजनीतिक और वैधानिक दृष्टि से जो महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए उनके अनुसार समाज में परिवर्तन नहीं हो सका। भारतीय संविधान ने उसे मताधिकार ही नहीं नागरिक के सभी अधिकार प्रदान किये। उसके कर्मक्षेत्र में भी अधिक विविधता तथा व्यापकता आ गयी। उत्तराधिकार, दहेज, विवाह-विच्छेद सम्बन्धी विधान बन जाने से उसके वैधानिक अधिकारों में भी वृद्धि हुई किन्तु भारत में कोई सामाजिक क्रान्ति नहीं हुई। अत: समाज के गठन में कोई क्रान्तिकारी परिवर्तन सम्भव नहीं हो सका। महादेवी वर्माजी ने कथाकारों की कथाओं में स्त्री के स्थान को दर्शात हुए लिखा है - ``नारी जागरण की दृष्टि से तो साहित्य उसके स्वत्व और व्यथा का समर्थ व्याख्याकार ही रहा है। कवियों के कण्ठ में भारत की जय ही नहीं गुँजी, नारी की जय भी ध्वनित हुई है। कथाकारों की आँखो में भारतमाता की परवशता पर ही आँसू नहीं आये है, विवश नारी के बन्धनों पर भी आये है। बंकिम, रविंद्र, शरत, मैथिलीशरण, प्रसाद आदि ने भारतीय नारी की महिमा की परिधि में उसकी युगान्तर दीर्घ मर्म व्यथा को वाणी दी है। इसी से उनके साहित्य में गंगा जमुनी आभा है।``[6]

महिलाओं ने इस रचनापर्व में कितना सहयोग दिया है, यह हेमन्तकुमारी चौधरानी, सरोजनी नायडु, सुभद्राकुमारी चौहान, तारणदेवी आदि की रचनाओं से प्रकट है। स्वातंत्र्योत्तर काल में जिन महिला साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं का सृजन किया है। ऐसी अन्य महिला साहित्यकार है - श्रीमती सत्यवती

मल्लिका, श्रीमती रजनी पनीकर, सुश्री, कंचनलता सब्बरवाला, श्रीमती चंद्रकिरण सौनरेक्सा, श्रीमती विमलवेद, श्रीमती सरिताराणी, श्रीमती शिवराणी विश्नोई, श्रीमती वसंत प्रथा, सुश्री कृष्णा सोबती, श्रीमती मीरा महादेवन, सुश्री उषा प्रियवंदा, श्रीमती पूष्पा भारती, शिवानी, मन्नु भंडारी, श्रीमती विद्यावती कोकिल, सुमित्रा कुमारी सिन्हा, महादेवी वर्मा, श्रीमती शचिरानी गुर्दु, प्रभा पारीक आदि। ये सिर्फ स्वातंत्र्योत्तर काल की महिला साहित्यकार है। स्वातंत्र्योत्तर पुरूष साहित्यकारों में प्रमुख है - उदयशंकर भट, सेठ गोविंददास, जगदीशचंद्र माथुर, अश्क, सुदर्शन, डा. लक्ष्मीनारायण लाल, मोहन राकेश, देवराज दिनेश, विष्णु प्रभाकार, विनोद रस्तोगी, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, शंकर शेष, नरेंद्र कोहली, धर्मवीर भारती, भीष्म सहानी, अज्ञेय, इलाचंद्र जोशी, अमृतलाल नागर, आचार्य चतुरसेन शास्त्री, जैनेन्द्र, रांगेय राघव, फणीश्वरनाथ रेणु, नरेश मेहता, देवेश ठाकुर आदि।

उपर्युक्त सभी साहित्यकारों के साहित्य का अध्ययन एक पीएच.डी. का विषय बन सकता है। इसलिए प्रमुखतम साहित्यकारों के साहित्य, कहानी, नाटक, उपन्यास इन विधाओं में नायिकाओं के स्वरूप का अत्यंत संक्षेप में विवेचन यहाँ हो सकता है।

लेखिकाओं के कथा साहित्य में नायिकाएँ :-

स्वातंत्र्योत्तर काल में जितनी महिला कथा साहित्यकार हुई है उन्होंने अलग- अलग ढंग से अपनी नायिकाओं को चितारा है। कहींपर नायिकाओं का मानसिक विश्लेषण किया गया है। तो कहीं अनेकानेक रूपों में प्रस्तुत किया है। जैसे शशिप्रभा शास्त्री अपनी नायिकाओं की मनोवैज्ञानिक समस्याओं का चित्रण करती है।मेहरन्निसा परवेज ने मध्यवर्गीय नायिकाओं का चित्रण किया है। शिवानीजी की नायिकाएँ रूमानी है तो कृष्णासोबतीजी की नायिकाओं में आधुनिकता बोध दिखाई देता हे। निरूपमा सेवती ने अपनी नायिकाओं के माध्यम से यंत्रणा संत्रास एवं तनाव से मुक्ति हासिल करने का, अस्तित्व की तलाश करने का प्रयास किया है। कृष्णा अग्निहोत्री ने अपनी नायिकाओं के माध्यम से भारतीय संस्कृति के सिमटे आधुनिकता के स्वर और व्यक्ति मन की छोटी-बड़ी संवेदनात्मक स्थितियों को कथानक के कलेवर में प्रस्तुत किया है। मणिकामोहिनी की नायिकाएँ समझदार है। मृदूला गर्ग की नायिकाएँ कुण्ठाग्रस्त मध्यवर्गीय यौन प्रश्नों में घिरी है। सुर्यबालाजी ने

अपनी नायिकाओं के माध्यम से जीवन के हर एक पहलु को पकड़ने का प्रयास किया है।

उषा प्रियवंदाजी जहाँ एक ओर अपनी नायिकाओं के माध्यम से आधुनिक सभ्य समाज के बदलते मुल्यों का चित्रण करती है। वही मन्नु भंडारीजी भारतीय नारी जीवन की नई समस्याओं का चित्रण करती है। सुधा आरोड़ा ने आधुनिक परिप्रक्ष्य में सामाजिक चेतना की सफल अभिव्यक्ति प्रस्तुत की है तो ममता कालियाने आधुनिक काल की समस्याओं से नारी मन का अंर्तद्वन्द्व बड़ी सहजता से और मार्मिकता से उभारा है।

उषा प्रियवंदा की नायिकाएँ कुण्ठा, पिड़ा संत्रास आदि से युक्त है। उन्होंने नारी शोषण के नये आयामों को चित्रित किया है। कृष्णा सोबतीजी की नायिकाओं में कहीं फ्रिजीडिटी दिखाई देती है तो कहीं विपूल वासना। दीप्ति खंडेलवाल ने अपनी नायिकाओं के माध्यम से तेज गति से बदलनेवाले युग को दिखाया हे। मृदूला गर्ग की नायिकाएँ यौनमुक्ति और स्वेच्छाचार की पक्षधर है। दीप्तिजी की नायिकाओं में निराशा के बावजूद एक दूर्दर्ष संघर्ष करने या झेलने का अद्दा है जब कि मृदूलाजी की नायिकाएँ मानसिक उहापोह से ग्रस्त है। कुसुम अंसल की नायिकाएँ अपने निर्णय पर दृढ निश्चयी दिखायी देती है। चाहे इसके लिए उन्हें कितना ही संघर्ष क्यों न करना पडे। अनिता औलक ने अपनी नायिकाओं के माध्यम से भारतीय लड़की की किशोर कामनाओं को उजागर करने का यत्न किया है। जिनकी सहाय्यता को सामाजिक परिवेश कुण्ठित करता है। जब कि सिम्मी हर्षिता ने अविवाहित नारी की समस्या को केन्द्रित किया है।

उपर्युक्त बातों से हमें इस बात का पता चलता है कि, लेखिका कथाकारों ने अपनी नायिकाओं के माध्यम से आधुनिक काल की समस्याओं का चित्रण तो किया ही है, साथ-ही-साथ आधुनिक भाव-बोध, मनोविश्लेषण आदि का भी चित्रण किया है।

लेखकों के कथा-साहित्य में नायिकाएँ :-

स्वातंत्र्योत्तर काल में जागृती का प्रभाव पुरूष कथा-साहित्यकारों पर भी पडा उन्होंने भी नायिकाओं की प्राचीन परिपाठी को छोड़कर आधुनिक चोला उसे पहनाया। आधुनिक काल के पुरूष कथाकारों ने

नारी के सभी रूपों का चित्रण किया है। भगवतीप्रसाद वाजपेयी की नायिकाओं के माध्यम से नारी-पुरूष प्रेम दिखाया गया है। जीवन के प्रति आदर्शवादी दृष्टिकोन, मनुष्य के नैतिक पतन की समस्या, नारी जीवन की समस्या आदि को भी उन्होंने प्रस्तुत किया है। भगवतीचरण वर्माजी ने अपनी नायिकाओं के माध्यम से शोषण और अत्याचार के विरूद्ध समस्त जीवन की कटुता तथा विद्रोह को उभारा है।

उपेन्द्रनाथ अश्क ने जहाँ अपनी नायिकाओं के माध्यम से तत्कालिन परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण किया है। वही रांगेय राघव वर्ग चेतना से प्रभावित होकर सामाजिक वर्ग वैषम्यों से पीड़ित मानव के जीवन को चित्रित करते हैं। अमृतराय ने अपनी नायिकाओं के माध्यम से वैयक्तिक जीवन के आधारपर प्रेम के भ्रम और सत्य का प्रतिकात्मक वर्णन किया है। गिरधर गोपाल ने जीवन की आर्थिक विषमताओं और संघर्षों का प्रभावशाली चित्रण किया है। विष्णु प्रभाकर ने अपनी नायिकाओं के माध्यम से वर्तमान समाज में नारी की दयनीय स्थिती पर आधारित एक सुधारवादी दृष्टिकोन दिखाया है। इलाचंद्र जोशीजी की नायिकाएँ तो कहीं कुण्ठाग्रस्त, कहीं आत्मलिन, कहीं शंकालु, कहीं पलायनवादी, कहीं निष्क्रीय, कहीं मानसिक दृष्टि से रूग्ण, कहीं विकृत चरित्रवाली, कहीं प्रतिहिंसाप्रिय दिखायी देती है। अज्ञेय की नायिका समाज से निर्लिप्त अपने ही भावों-अभावों में लिप्त घोर व्यक्तिवादी और आत्म-केंद्रिता है। प्रभाकर माचवे ने नायिकाओं के माध्यम से नारी की समाज विमुख चेतना का चित्रण किया है। यह चेतना उसे समस्त पुरूष समाज को उसके शरीर को झंझोडनेवाली दानव के रूप में दिखाती है। मोहन चोपड़ा ने अपनी नायिकाओं की मानसिक कुण्ठाओं मन की आकाक्षाओं और सामाजिक संस्कारों के आधारपर उनकी मार्मिक स्थिती का चित्रण किया है। यशपाल की नायिकाएँ यथार्थवादी दृष्टिकोन प्रस्तुत करती है। मोहन राकेश की नायिकाओं में नयी युग चेतना दिखाई देती है। राजेन्द्र यादव ने अपनी नायिकाओं के माध्यम से मध्यवर्गीय जीवन की समस्याएँ आदि का यथार्थ चित्रण किया है।

इस प्रकार हम यह देखते है कि स्वातंत्र्योत्तर काल में नायिकाओं की ओर देखने की परम्परागत दृष्टि को त्याग गया और नये रूप में नायिकाओं को प्रस्तुत किया गया।

लेखिका नाटक एवं एकांकीकारों के नाट्य साहित्य में नायिकाएँ :-

वैसे तो लेखिका नाटक एवं एकांकीकारों की हिंदी साहित्य में संख्या अल्प ही है। फिर भी कुछेक के द्वारा किये गये प्रयास अत्यंत सफल हुए है। इनमें मृदूला गर्ग एक सफल नाटककार रही है। उन्होंने अपने नाटकों की नायिकाओं के माध्यम से जो दिखाया हे उस सम्बन्ध में नारायण राय कहते हैं -

``प्यार और सेक्स जीवन की स्वाभाविकता होकर भी नितांत नाटकियता और आडम्बर में अपनी आदिम महक खो चूका है। एक मशीनी, निर्जिव, नीरस और शुष्क औपचारिकता ने जीवन के सहज प्रभाव को उदरस्त कर लिया है।``[7]

मंजुला गुप्ता भी ऐसी ही एक सफल नाटककार रही है। मन्नु भंडारी ने एक ही नाटक लिखा उसकी नायिका के माध्यम से मन्नुजी ने जो तथ्य उपस्थित किये हे उस सन्दर्भ में डॉ. नरेन्द्रनाथ त्रिपाठी लिखते है - ``भारतीय समाज में पहले नारी अपने व्यक्तित्व को पुरूष के व्यक्तित्व में विसर्जित कर देती थी और उसकी प्रगती को अपनी ही प्रगती मानकर चलती थी। किंतु वर्तमान परिवेश ने इस स्थिति को पूरी तरह से बदल दिया है। आज की शिक्षिता नारी अपने अहं का विसर्जन कर अपने व्यक्तितव को पति के व्यक्तित्व में विलिन नहीं कर पाती। वह अपने व्यक्तित्व को पति के व्यक्तित्व से अलग मानकर चलती है और अस्तिता का तलाश में भटकती रहती है।``[8]

महिला एकांकीकारों में से श्रीमती विमला लुथरा एम.ए जी ने अपनी नायिकाओं के माध्यम से समाज की विद्रुपताओं को उभारा है। श्रीमती रत्नकुमारीजी ने कहीं अपनी नायिकाओं का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है तो कहीं वर्तमान सामाजिक समस्याओं को चित्रित किया है। श्रीमती शचीरानी गुर्टु ने अपनी नायिकाओं के माध्यम से सामाजिक एवं आर्थिक व्यंग्य और पौराणिक आदर्शवाद को प्रस्तुत किया है। प्रभा पारीख की नायिकाएँ नवीन विचारों से प्रभावित दिखाई देती है।

उपर्युक्त बातों को देखने से हमें इस बात का पता चलता है, कि लेखिका नाटककारों की नायिकाओं में पारम्पारिक एवं आधुनिक दोनों ही प्रकार की नायिकाएँ दिखाई देती है।

लेखक नाटक एवं एकांकीकारों के नाट्य साहित्य में नायिकाएँ:-

जिस प्रकार उपन्यास कहानी आदि विधाओं में स्वातंत्र्योत्तर काल की नायिकाओं का स्वरूप बदल गया है। उसी प्रकार एकांकी और नाटक साहित्य में भी नायिकाओं का स्वरूप बदल गया। उनमें नारी जागरण आधुनिकता बोध दिखाई देता है। उपेन्द्रनाथ अश्क के नाटकों में जहाँ एक ओर रूढ़ियों को तोड़कर खुले वातावरण में साँस लेनेवाली नायिका है। वही दूसरी ओर सामाजिक रूढ़ियों में बंधी नायिका का चित्र है। डा. लक्ष्मी नारायण लाल ने नाटक की नायिका की विभिन्न मन:स्थितियों का सुक्ष्म मनोवैज्ञानिक निरूपन किया है। कहीं उनके नाटकों की नायिका एक साथ नायक और खलनायक की भुमिकाओं को निभाती हे। मोहन राकेश के नाटकों की नायिका रोमानी प्रवृत्ती की है। भीष्म सहानी ने पाँच नाटक लिखे हे लेकिन एक ही नाटक नायिका प्रधान है। उसकी नायिका पौराणिक चरित्र है। ज्ञानदेव अग्निहोत्री की नायिकाएँ मानवतावादी प्रवृत्ति की दिखायी देती है। विष्णु प्रभाकर की नायिका क्रान्ति लाना चाहती है।

आधुनिक काल के एकांकीकारों में अश्कजी ने नायिकाओं के माध्यमसे समाज और राजनीतिपर व्यंग्य किया है। जगदीशचंद्र माथुर, भारत भुषण अग्रवाल, कृष्ण श्रीवास्तव, विनोद रस्तोगी, उदयशंकर भट्ट, प्रभाकर माचवे आदि के एकांकीयों में आधुनिकता बोध दिखायी देता है।

इस प्रकार हम यह कह सकते है कि स्वातंत्र्योत्तर काल में नायिकाएँ अपने प्राचीन रूप को छोड़कर नये रूप में उतर आयी उनके माध्यम से कहीं मनोविश्लेषण किया गया, कहीं आदर्शवाद दिखाया गया किसी ने उसका यथार्थ अंकन किया तो कहीं उनके माध्यमसे मानवतावाद का चित्रण किया। इसी वजहसे उनका बदला हुआ रूप आधुनिक नारी का एक प्रतिबिंब बन गया।

निष्कर्ष :-

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता हे कि प्राचीन काल से ही नायिका के स्वरूप, विकास एवं प्रकारों पर चर्चा होती आयी है। भरतमुनि से लेकर कई आलोचकों ने इस पर अपने अलग- अलग मत प्रस्तुत किये हैं। नायिकाओं के प्राचीन स्वरूप के अंतर्गत उसके उत्तमा, मध्यमा, अधमा तथा स्वकीया, परकिया और सामान्या आदि कई तरह से भेद किये गये। नायिकाओं के आधुनिक स्वरूप के अंतर्गत हम यह पाते हैं कि नायिकाओं की कल्पना कहानियों के अंतर्गत अलग ढंग से हुई है, उपन्यासों के अंतर्गत अलग ढंग से प्राचीन काल में जो नायिका के सौंदर्य, गुण आदि के बारे में माना जाता था, वही बातें आधुनिक काल की नायिकाओं के लिए नहीं मानी जाती आधुनिक काल में एक सामान्य परिवार की स्त्री भी नायिका बन सकती है। उसमें सभी आदर्श गुण होने ही चाहिए ऐसी बात नहीं है। स्वातंत्रता के बाद जो नारी जागरण और नारी मुक्ति आंदोलन छिड़ गये उनका भी असर नायिकाओं के स्वरूप को बदलने में कारण बन गया। चाहे महिला साहित्यकार हो, चाहे पुरूष साहित्यकार हो सभी ने नायिकाओं के स्वरूप में आधुनिकता लायी इसी वजह से हम आज यह पाते हैं कि नायिकाएँ एक प्रतिक के रूप में भी प्रयुक्त होने लगी है। जैसे- जैसे परिस्थितियाँ परिवर्तित होगी वैसे- वैसे नायिकाओं का स्वरूप भी परिवर्तित होगा और उनके प्रकारों में भी परिवर्तन होग।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डा. पुष्पलता - ``रीतिकालिन शृंगारिक सतसईयों का तुलनात्मक अध्ययन' - पृष्ठ 91

2. डा. इन्द्रपाल सिंह - `शृंगार रस का शास्त्रीय विवेचन' - पृष्ठ 138

3. डा. इन्द्रपाल सिंह - `शृंगार रस का शास्त्रीय विवेचन' - पृष्ठ 142

4. डा. इन्द्रपाल सिंह - `शृंगार रस का शास्त्रीय विवेचन' - पृष्ठ 144

5. डा. नगेन्द्र - `रीतिकाव्य की भूमिका' पृष्ठ 139

6. महादेवी वर्मा - `संभाषण' - पृष्ठ 94

7. नरनारायण राव - `आधूनिक हिंदी नाटक एक यात्रा दशक' - पृष्ठ 298

8. डा. नरेन्द्रनाथ त्रिपाठी - साठोत्तर हिंदी नाटकों में स्त्री-पुरूष सम्बन्ध -पृष्ठ 172